शोधार्थी – **रूबीना**

शोध-निर्देशक – प्रो. अब्दुल बिस्मिल्लाह

विभाग – हिन्दी

विषय – छठवें-सातवें दशक की हिन्दी-उर्दू कहानियों में शहरी मध्यवर्ग का तुलनात्मक अध्ययन

शोध-सार

भारत में मध्यवर्ग का उदय आजादी से पहले ही हो चुका था। यह वर्ग तत्कालीन शासन के विभिन्न पदों पर बैठा हुआ था, लेकिन उस समय मुट्ठी भर अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग ही इस वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। खाता-पीता यह वर्ग जीवन के हर क्षेत्र में अपना अधिकार जमाए हुए था। कारण यह कि भारत के उभरते हुए इस मध्यवर्ग को शिक्षा से लेकर नौकरी या किसी अन्य पेशे के लिए तमाम तरह के अवसर मिले हुए थे। इसलिए यह वर्ग देखने में भले ही भारतीय रहा हो, लेकिन अपनी रुचि, नैतिक मानदण्ड और मानसिकता में अंग्रेज ही रहा। उसका सामंती चरित्र भी उसके साथ जुड़ा हुआ था। दूसरी बात, यह मध्यवर्ग पढ़े-लिखे होने के कारण खुद को समाज में रहने वाले अन्य लोगों से ज्यादा अच्छा और सभ्य मानता रहा है। इसके साथ ही यह वर्ग सामाजिक, धार्मिक और नैतिक नियमों के प्रति लगाव होने का दिखावा भी करता है। यह वर्ग परंपरा व रूढ़ियों से बंधा और खुदगर्ज भी होता है। इसके अलावा मध्यवर्गीय व्यक्ति रहन-सहन, खान-पान और वैचारिक दृष्टि से मूलतः पश्चिमी देशों की तर्ज पर रहने की पूरी कोशिश करता है। सबसे बड़ी बात यह है कि मध्यवर्ग अपने हितों के प्रति हमेशा सचेत रहता है।

छठवें-सातवें दशक की हिन्दी-उर्दू कहानियों का विषय विभिन्न मसलों से संबंधित है। इस दौर की कहानियों का फलक विविध कहानी आंदोलनों के कारण विस्तृत हुआ। विषय और फलक के विस्तार के कारण कहानी की पहुंच जीवन के हर क्षेत्र में होने लगी। संवेदना के स्तर पर भी इस समय की कहानियों को देखा जा सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि छठवें-सातवें दशक की हिन्दी-उर्दू कहानियों का यथार्थ सिर्फ मध्यवर्गीय जीवन से ही संबंधित नहीं है बल्कि समाज सभी वर्गों की समस्याएं उसमें अंतर्निहित हैं। इसके साथ ही मध्यवर्ग का जो स्वरूप हिन्दी-उर्दू कहानियों में दिखाई पड़ता है वह बहुत हद उस दौर के यथार्थ से जुड़ा हुआ है। शहरी मध्यवर्ग की जीवन स्थिति और समस्याएं इस दौर की कहानियों में विशेष रूप से सामने आती हैं। आजादी के बाद भारत जैसे देश में बदली हुई परिस्थितियों के कारण एक ओर जहां मानवीय संबंधों में बदलाव आया, वहीं दूसरी ओर नये सामाजिक मूल्यों की भी स्थापना हुई। इन बदले मानवीय संबंधों और नये सामाजिक मूल्यों का प्रभाव समाज के सभी तबकों पर पड़ा। इन सारी स्थितियों के बावजूद शहरी मध्यवर्ग का जीवन तमाम तरह के छल-छद्म से भरा रहा। उस वर्ग ने अपनी आत्म-मुग्धता में रहते हुए अपने जीवन को पैसे और सुख-सुविधाओं को हासिल करने के लिए पूरी तरह लगा दिया। ऐसे में उसके सामने कई तरह की समस्याएं भी आईं, लेकिन और ज्यादा

सुख-सुविधा हासिल करना उसके जीवन का मकसद बन गया। इसलिए उसके मानवीय संबंध दिन-ब-दिन संकुचित होते गये, पारिवारिक समस्याएं भी पैदा होने लगीं। ये सारी बातें शहरी मध्यवर्ग के जीवन का हिस्सा बन गईं। इन्हीं समस्याओं को छठवें-सातवें दशक के हिन्दी-उर्दू कहानीकारों ने अपनी कहानियों में चित्रित किया है।

छठें दशक में हिन्दी में 'नई कहानी' जैसे आंदोलन के विकास के साथ कहानी समाज के व्यापक परिप्रेक्ष्य को समेटने लगी। इसलिए इसमें यथार्थ-बोध की संवेदना को भी स्पेस मिला। इसी के साथ शहरी मध्यवर्ग के जीवन-यथार्थ की भी इसमें अभिव्यक्ति हुई। इन कहानियों में जहां शहरी मध्यवर्ग के संघर्ष का चित्रण हुआ है, वहीं उसकी कुंठा, काम, संत्रास आदि जटिल मनःस्थितियों की भी अभिव्यक्ति हुई है। शहरी मध्यवर्ग के सामाजिक संबंधों को इस दौर की कहानियों में जिस तरह चित्रित किया गया है उसी तरह अन्य पक्षों को भी। शहरी जीवन की असुरक्षा, भय आदि को भी हिन्दी-उर्दू के कहानीकारों ने समान रूप से चित्रित किया है। इसके साथ ही शहरी मध्यवर्ग के सामाजिक-पारिवारिक संबंधों और नई स्थितियों के साथ बदलते संबंधों के कारणों की ओर भी इन कहानीकारों ने इशारा किया है। मध्यवर्ग की विडम्बनात्मक स्थिति को इस समय की कहानियों में देखा जा सकता है। छठें दशक के हिन्दी-उर्दू कहानीकारों ने जिस शहरी मध्यवर्ग के जीवन के इतने आयाम उद्घाटित किए, उस मध्यवर्ग की असलियत यह रही है कि वह मानसिक रूप से तो नवीन मूल्यों को अपनाना चाहता है, लेकिन परंपरागत रूप से वह पुराने आदर्शों को भी कायम रखना चाहता है। इसलिए शहरी मध्यवर्ग आधुनिक संस्कृति के पीछे जिस तरह से लालायित दिखता है उसी तरह वह परंपरागत आदर्शों को भी अपने जीवन का अंग बनाये रखना चाहता है। फिर भी वह इन्हीं द्वन्द्वों में पड़ा रहता है, उसका कोई निश्चित हल नहीं निकाल पाता।

सातवें दशक तक आते-आते समाज-व्यवस्था में अंतर्विरोधों के बढ़ जाने के कारण कई तरह की समस्याएं पैदा हुईं। इसकी वजह से एक ओर जहां समाज में आर्थिक असामनता बढ़ी, वहीं दूसरी ओर सामाजिक संबंधों में भी बदलाव आया। इसीलिए इस दौर के हिन्दी-उर्दू कहानीकारों ने समाज के विरोधाभासों, अर्थहीन आदर्शों की खोखली जीवन-पद्धति, पाखंडों के अलावा आर्थिक संबंधों के तनावों, पारिवारिक संबंधों के खिंचाव के रूप में जो नतीजे सामने आए उन सभी की अभिव्यक्ति कहानियों के जरिए की है। मध्यवर्गीय चेतना को जिस रूप में इन कहानीकारों ने देखा उसे उसी रूप में व्यक्त किया। इसके साथ ही मध्यवर्ग की विकृतियों को भी व्यक्त करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। इस तरह सातवें दशक के हिन्दी-उर्दू कहानीकारों ने मध्यवर्ग की जीवन स्थितियों और पद्धतियों के प्रति सतर्क नजर रखते हुए उनकी समस्याओं और कमियों को कहानी के माध्यम से मूर्त रूप दिया। दूसरी बात यह कि नगरीकरण की प्रक्रिया ने शहरी मध्यवर्ग को एक ऐसा संवदेनहीन आधार प्रदान किया जहां वह सब कुछ भूलकर स्वयं में सिमटकर रहने लगा। उसने स्वयं अपनी सामाजिकता को समेट लिया, इसके विपरीत उसके जीवन में एकाकीपन, ऊब, अजनबीपन जैसे बोझिल तत्वों का समावेश होने लगा। इसका कारण शहरी मध्यवर्ग के जीवन की अर्थलोलुपता है। सब कुछ हासिल करने की ख्वाहिश में यह मध्यवर्ग इस कदर आत्मकेंद्रित हो गया कि उसकी सामाजिकता भी पूरी तरह खत्म हो गई। यही बात उसके जीवन को बोझिल भी बना देती है।